शरद ऋतु यह विसर्ग काल का दूसरा ऋतु है। शरद ऋतु का आगमन प्राय: सितंबर एवं अक्तूबर (अश्विन, कार्तिक) इन महिनों में होता है। इस ऋतु में आकाश बरसाती बादलों से रहित, स्वच्छ निर्मल सूर्यकिरणों से व्याप्त रहता है। वर्षा ऋतु में विषैले कृमि तथा उनके मल–मूत्र–लाला के कारण जल विषवत् बनता है। शरद ऋतु में दिन में सूर्य की किरणों से गरम हुआ जल रात्रि में चन्द्रमा की किरणों से शीतल बनता है। साथ ही अगस्त्य तारे के उदय के कारण जल विषरहित बन जाता है। इस जल को 'हंसोदक' कहते हैं। शरद ऋतु का यह जल निर्मल एवं पवित्र होता है।

शरद ऋतु में सूर्य की उष्णता के कारण वर्षा ऋतु में संचित पित्त का प्रकोप होता है। इस ऋतु में सूर्य की बढती उष्णता के कारण वातावरण एवं वनस्पतियों में भी अम्लीयता बढ जाती है। शरद ऋतु में वात प्रशमावस्था, पित्त प्रकोपावस्था एवं कफ साम्यावस्था में होता है। प्रकुपित पित्त के कारण शरद ऋतु में दाह, राग, पाक, कोठ, अंगसाद, मूर्च्छा एवं मद आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

शरद ऋतु में प्राय: विकृत् होनेवाले स्रोतस् हैं– रक्तवह स्रोतस् एवं आर्तववह स्रोतस् और इन्हीं स्रोतसों के दुष्टि के लक्षण इस ऋतु में दिखाई देते हैं। रक्तवह स्रोतस् दुष्टि के कारण कुष्ठ, विसर्प, पिडका, क्षुद्ररोग, यकृत् – प्लीहा विकार एवं रक्तपित्त जैसे व्याधि उत्पन्न हो सकते हैं। आर्तववह स्रोतस् दुष्टि के कारण कष्टार्तव, श्वेतप्रदर, अत्यार्तव/रक्तप्रदर, वंध्यत्व, योनिगत व्रण, सरंभावस्था एवं योनिदाह जैसे व्याधि उत्पन्न हो सकते हैं।

'औषधी विवरण पुस्तिका शरद ऋतु २०१८' के इस अंक में हम उपरोक्त वर्णित व्याधियों की चिकित्सा में उपयुक्त औषधी कल्पों की चर्चा करेंगे। वह कल्प हैं – सूतशेखर रस, गंडमाला कंडन रस, गंधक रसायन, लोह भस्म, पंचामृत पर्पटी, प्रवाल पिष्टी, संशमनी वटी एवं ताम्र भस्म।

संपूर्ण देशभर से विविध वैद्यों द्वारा अत्यंत उत्साहपूर्ण प्रतिक्रिया हमें प्राप्त हो रही हैं। सभी विद्वत् वैद्यों को धन्यवाद! शरद ऋतु में प्रकाशित औषधी विवरण पुस्तिका एवं साहित्य के प्रति आपकी प्रतिक्रिया का हमें इंतजार रहेगा। औषधी विवरण पुस्तिका शरद ऋतु २०१८ के बारे में हमें आपकी राय/प्रतिक्रिया healthcare@sdlindia.com पर लिखित रुप में जरुर भेजें।

धन्यवाद ।

सूतशेखर रस

भारत भैषज्य रत्नाकर ५/८२६१

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०९००१२४

सूतशेखर रस अधिकतर एवं नियमित प्रयुक्त किए जानेवाला कल्प है, जो पित्त की मात्रा अर्थात् पित्त दुष्टि की औषधी के नाम से भी ज्ञात है। यह सुवर्णकल्प है, जिसमें सुवर्ण भस्म, शोधित पारद, शोधित गंधक, ताम्र भस्म, शंख भस्म, शोधित टंकण, शोधित वत्सनाभ एवं शोधित धत्तूर बीज जैसे महत्त्वपूर्ण घटक द्रव्य उपस्थित हैं।

सूतशेखर रस में उपस्थित कज्जली योगवाही एवं रसायन है। सुवर्ण भस्म, हृद्य, बल्य, विषघ्न एवं रसायन है। ताम्र भस्म यकृतोत्तेजक एवं पित्त निस्सारक है। शोधित टंकण भस्म कफ–वातनाशक एवं शूलघ्न है। शोधित धत्तूर बीज व्यवायी, विकाशी एवं वात–कफनाशक है। शंख भस्म अग्निदीपक, पाचक एवं शूलघ्न है, तथा क्षारीय होने के कारण यह विदग्ध पित्त के बढे हुए अम्लत्व का शमन करने में सहायक होता है। भावना द्रव्य के रुप में प्रयुक्त भृंगराज स्वरस यकृत् का कार्य सुधारने में सहायक होता है।

भारत भैषज्य रत्नाकर में सूतशेखर रस की कार्मुकता का वर्णन निम्नप्रकार से किया है: –

भक्षयेत् अम्लपित्तघ्नो वान्तिशूलामयापहः।।
पञ्चगुल्मान् पञ्चकासान् ग्रहण्यामयनाशनः।
त्रिदोषोत्थातिसारघ्नः श्वासमन्दाग्निनाशनः।।
उग्रहिक्कामुदावर्तं देहयाप्यगदापहः।
मण्डलान्नात्र सन्देहः सर्वरोगहरः परः।।
राजयक्ष्महरः साक्षात् रसोऽयं सूतशेखरः।।

भा.भै.र. ५/८२६१

सूतशेखर रस विशेषत: अम्लपित्त की सामावस्था में उपयुक्त है। साथ ही यह छर्दि, उदरशूल, गुल्म, कास, ग्रहणी, अतिसार, श्वास, अग्निमांद्य, हिक्का, उदावर्त एवं राजयक्ष्मा में भी असरदार है। सूतशेखर रस बयालीस अर्थात् १ मण्डल तक प्रयुक्त करने पर सभी प्रकार के व्याधियों में उपयुक्त साबित होता है, ऐसे आचार्यों का मानना है।

सूतशेखर रस का प्रयोग अनुपान रुप में मधु एवं घृत (असमान मात्रा में) के साथ करना चाहिए। अम्लपित्त व्याधि के निदान का वर्गीकरण निम्नलिखित सूत्र में किया गया है,

विरुद्धदुष्टाम्लविदाहिपित्तप्रकोपि पानान्नभुजो विदग्धम्।
पित्तं स्वहेतूपचितं पुरा यत्तदम्लपित्तं प्रवदन्ति सन्तः।।

मा.नि.५१/१

नियमित एवं अधिक मात्रा में विरुद्ध आहार, दुष्ट भोजन (बासी, दूषित आहार), अति अम्ल, विदाही आहार के साथ पित्तप्रकोपक आहार – विहार के कारण अम्लपित्त उत्पन्न होता है। इस अवस्था में सूतशेखर रस का प्रयोग सेवन किए आहार के योग्य पचन एवं विषारनाशन में सहायक होता है। यह ग्रहणी का बल बढाने में सहायक होने के साथ धातु परिपोषण सुधारता है।

छर्दि में सूतशेखर रस अपने उष्ण, दीपक एवं पाचक गुणों से विदग्ध पित्त के पाचन में सहायक होता है। साथ ही यह आमाशय क्षोभ का शमन करने में भी सहायक होता है।

अधिकतर समय शिर:शूल पित्त दुष्टि से संबंधित दिखाई देता है। सूतशेखर रस अपने पित्तशामक, आमपाचक एवं उष्ण गुणों से पित्त दुष्टि कम कर शिर:शूल से राहत देने में सहायक होता है।

गंडमाला कंडन रस

आयुर्वेदिक फॉर्म्युलरी ऑफ इंडिया भाग २–१६/१३
एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०८०२३७४

'गंडमाला का कंडन' अर्थात् नाश करनेवाला होने के कारण इस कल्प को गंडमाला कंडन रस कहा जाता है। यह खल्वी रसायन है। गंडमाला कंडन रस में शोधित पारद, शोधित गंधक, ताम्र भस्म, सैंधव लवण, मण्डूर भस्म, शोधित गुग्गुल (त्रिफला विशेष शोधित), शुण्ठी, मरिच, पिप्पली एवं कांचनार आदि घटक द्रव्य उपस्थित रहते हैं। इन सभी द्रव्यों को गोघृत की भावना दी जाती है।

गंडमाला कंडन रस में कांचनार यह मुख्य घटक द्रव्य है। अन्य घटक द्रव्यों की तुलना की जाए तो गंडमाला कंडन रस में कांचनार एवं शोधित गुग्गुल अधिक मात्रा में उपस्थित हैं। भावप्रकाशकारने किए वर्णन के अनुसार कांचनार– **काञ्चनारो हिमो ग्राही तुवरः श्लेष्मपित्तनुत्। कृमि कुष्ठ गुदभ्रंश गण्डमाला व्रणापहः।** भा. प्र. गुडूच्यादिवर्ग – १०३ अर्थात् शीत, ग्राही, कफ–पित्त, कृमि, कुष्ठ, गुदभ्रंश, गंडमाला एवं व्रण का नाश करता है। साथ ही कांचनार लेखन, मेद – कफनाशक, व्रणशोधक एवं व्रणरोपक है। ताम्र भस्म यकृतोत्तेजक, लेखन एवं योगवाही है। मण्डूर भस्म मेदोधात्वग्नि को अपने प्राकृत् कार्य करने में मदद करता है, जिससे अपाचित मेद का योग्य काल में पाचन होने में सहायता मिलती है। त्रिकटु (शुण्ठी, मरिच, पिप्पली) अग्निदीपक एवं कफ–मेदोपाचक कार्य करता है। त्रिफला क्वाथ में विशेष शोधन होने से गुग्गुल के लेखन, दीपन एवं रसायन कार्यों में वृद्धि होती है। गंडमाला कंडन रस में उपस्थित घटक द्रव्यों के कारण उष्ण वीर्यात्मक, दीपक, पाचक, कफनाशक एवं मेदोपाचक होता है।

अपने – अपने कारणों से वायु एवं कफ गलप्रदेश में प्रकुपित होने के पश्चात् मेद को दूषित कर मन्या प्रदेश की सिराओं में संश्रित होकर अपने – अपने लक्षणों को प्रकट करते हुए क्रमश: अर्थात् धीरे –धीरे बढनेवाले उत्सेध अर्थात गंड को उत्पन्न

कर देते हैं। इस व्याधि को गलगंड कहते हैं। गलगंड इस व्याधि में गलप्रदेश में उत्पन्न उत्सेध/वृध्दि निबद्ध (अनुबन्धयुक्त अर्थात् अभिन्न) एवं मुष्क (वृषण) के समान लटकता है। यह उत्सेध/वृध्दि आकार में बडा या छोटा भी हो सकता है। गलगंड को ग्वाइटर (Goiter) भी कहते हैं। यह गले की थायरॉईड (Thyroid) ग्रंथि के बढने से उत्पन्न होता है। इसके कारण गले में शोथ, सर्वांग शोथ, चिडचिडापन, बेचैनी, निगलने में कठिनाई, दौर्बल्य एवं स्थौल्य आदि लक्षण दिखाई दे सकते हैं। गलप्रदेश में माला सदृश्य उत्पन्न होनेवाली ग्रंथियों को गंडमाला कहा जाता है। गंडमाला में मंद ज्वर, अंगमर्द एवं अग्निमांद्य आदि लक्षण दिखाई देते हैं। गंडमाला कंडन रस उष्ण, अग्निदीपक, लेखन, वातशामक एवं मेदोपाचक होने से गलगंड एवं गंडमाला संबंधित इन लक्षणों में उपयुक्त साबित होता है। गंडमाला कंडन रस नूतन एवं जीर्ण गंडमाला में लाभदायक होता है। गंडमाला कंडन रस उत्तम मेदोपाचन एवं लेखन कार्य से स्थूल प्रकृति के व्यक्तियों में अधिक लाभकर होता है।

गंडमाला व्याधि में उपद्रव स्वरुप उत्पन्न ज्वर, प्लीहा वृद्धि एवं पाण्डु में भी गंडमाला कंडन रस उपयुक्त साबित होता है। गंडमाला कंडन रस गिलायु वृद्धि में गिलायु को साधारण या प्राकृत अवस्था में लाने के लिए लाभदायक होता है। साथ ही यह अपची एवं ग्रंथि में भी लाभ देता है।

गंधक रसायन

भारत भैषज्य रत्नाकर २/१५३३

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०५०००२४

गंधक रसायन नाम में 'रसायन' शब्द आता है, अर्थात् इसका प्रयोग हर एक धातु – सप्तधातु के लिए रसायन के लिए करना चाहिए। इसका वर्गीकरण गुटी – वटी में किया गया है। यह बनाते समय शोधित गंधक को गोदुग्ध की तीन भावनाएँ देने के पश्चात् त्वक्, त्वक् पत्र, एला, नागकेशर, गुडूची, हरीतकी, बिभीतक, आमलकी एवं शुण्ठी इन द्रव्यों के स्वतंत्र क्वाथ की उसी क्रम में आठ–आठ भावनाएँ दी जाती हैं। साथ ही भृंगराज स्वरस एवं आर्द्रक स्वरस प्रत्येक की आठ भावनाएँ दी जाती है।

अंत में भावित गंधक के समान भाग शर्करा मिश्रित कर 'गंधक रसायन' तैयार किया जाता है।

गंधक रसायन में उपस्थित शोधित गंधक के गुणों का वर्णन रसतरंगिणीकारने निम्नलिखित सूत्र द्वारा किया है,

गन्धः शुद्धो गर – विषहरः क्षुद्रकुष्ठेभसिंहः
कासं श्वासं हरति नितरां दद्रुदावानलश्च।
आधिव्याधि प्रशमनपटुः काममामं निहन्यात्।

– र. त. ८/३६

अर्थात् शोधित गंधक का प्रयोग गरविष की चिकित्सा के लिए किया जाता है। यह क्षुद्र कुष्ठ, कास एवं श्वास का नाश करता है। शोधित गंधक विषहर, आमपाचक एवं उत्तम रसायन औषधि है। यह कटु रसात्मक एवं उष्ण वीर्यात्मक है। साथ ही जाठराग्नि भी बढाता है। गंधक के इन गुणों को भावना द्रव्य 'संस्कार' क्रिया द्वारा ओर भी वृद्धिंगत करते हैं।

गंधक रसायन की कार्मुकता का वर्णन भारत भैषज्य रत्नाकरने निम्नलिखित सूत्र द्वारा किया है,

धातुक्षयं मेहगणाग्निमांद्यं शूलं तथा कोष्ठगतांश्च रोगान्।
कुष्ठान्यथाष्टादश रोगसंघान्निवारयत्येव च राजयोगम्।

– भा. भै. र. २/१५३३

अर्थात् गंधक रसायन धातुक्षय, प्रमेह, अग्निमांद्य, शूल, उदररोग एवं अठारह प्रकार के कुष्ठ में उपयुक्त होता है। गंधक रसायन अग्निदीपक, कंडूनाशक, कुष्ठघ्न एवं विषदोषनाशक है।

सभी व्याधियों की उत्पत्ति का कारण अग्निमांद्य होता है। गुरु, असात्म्य, विरुद्ध एवं अकाल समय आहार सेवन करने से अग्नि विकृत होता है। परिणामस्वरुप, आमविष उत्पन्न होता है। आमविष के कारण विभिन्न प्रकार के व्याधि उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के आमविषजन्य विकारों में गंधक रसायन का प्रयोग लाभदायक होता है। अतिमात्रा में मत्स्य, दधि सेवन एवं

जंक फूड जैसे आहार का सेवन करने से रस, रक्त एवं मांस आदि धातुओं की दुष्टि होकर त्वचाविकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों में त्वक् वैवर्ण्य, कंडू एवं स्राव आदि लक्षण दिखाई देनेपर गंधक रसायन का प्रयोग लाभदायक साबित होता है।

त्वचा पर पिटिकोत्पत्ति, कंडू, दाह एवं मलबद्धता आदि लक्षणों में गंधक रसायन का प्रयोग उपयुक्त होता है। पामा जैसे त्वचाविकार में पिटिका, विशेषत: रात्रि के समय अधिक कंडू, त्वक् वैवर्ण्य – अंगुलियों के मध्य, कटिप्रदेश पर तथा लसिका – पूय – रक्तस्राव होनेपर गंधक रसायन लाभदायक साबित होता है। इस अवस्था में गंधक रसायन पचन सुधारकर एवं रक्त शुद्धि कर असरदार साबित होता है। साथ ही योग्य मलप्रवृत्ति एवं कृमिनाशन कार्य भी करता है। गंधक रसायन विचर्चिका एवं मंडल कुष्ठ में भी लाभदायक होता है। विचर्चिका में कंडू एवं स्रावयुक्त श्याव वर्णी पिडका दिखाई देती हैं। इस अवस्था में आमपाचक, क्लेदनाशक एवं विषघ्न गुणों के द्वारा गंधक रसायन स्राव एवं कंडू जैसे लक्षणों से राहत देने में सहायक साबित होता है। पूयनाशक एवं क्लेदपाचक होने के कारण गंधक रसायन का प्रयोग पूयदंत एवं कर्णस्राव की चिकित्सा में किया जा सकता है।

गंधक रसायन जीर्ण नाडीव्रण, जीर्ण उपदंश, दुष्ट पीनस एवं पूयशुक्र में भी उपयुक्त होता है। कुष्ठ की चिकित्सा में पंचकर्मो द्वारा सम्यक् शुद्धि के पश्चात् गंधक रसायन का प्रयोग कुष्ठ व्याधि निर्हरण के साथ-साथ उसके अपुनर्भव को रोकने हेतु भी लाभदायक साबित होता है।

लोह भस्म

भारत भैषज्य रत्नाकर ४/६४१६

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०२०००८

रसतरंगिणीकारने लोह भस्म के गुणों का वर्णन निम्नलिखित सूत्र द्वारा किया है,

लौहं रुक्षं सुमधुरमलं पाकतश्चाथ तिक्त
वीर्यं शीतं गुरु च तुवरं लेखनञ्चातिनेत्र्यम्।
बल्यं वृष्यं जठरगदनुत् श्लेष्मपित्तामयघ्नं
वर्ण्यं मेध्यं खलु किमधिकं हन्ति नानामयघ्नम्।।

लौहं दीपनमुत्तमं क्षयहरं कुष्ठामयध्वंसकं
गुल्मप्लीहविधूननं क्रिमिहरं पाण्ड्वामयघ्नं परम् ।।

र. त. २० / ८३-८४

अर्थात् लोह भस्म तिक्त – कषाय रसात्मक, मधुर विपाकी, शीत वीर्यात्मक एवं रुक्ष है। यह लेखन, गुरु, वृष्य एवं बल्य गुणों से युक्त होता है। लोह भस्म नेत्र विकारों में उपयुक्त है। यह उदररोगनाशक, कफ-पित्त विकारनाशक एवं त्वचाविकारनाशक है। लोह भस्म उत्तम अग्निदीपक, मेध्य, क्षयरोग, कुष्ठ एवं पाण्डुरोगनाशक है। इसका प्रयोग करने पर मेदोविकार, प्रमेह, कृमि एवं श्वास आदि रोगों का नाश होता है।

पाण्डु व्याधि में रुक्ष त्वचा, निस्तेज त्वचा, दौर्बल्य, उत्साह हानि, रक्ताणुओं में कमी एवं अग्निमांद्य आदि लक्षणों में लोह भस्म उपयुक्त साबित होता है। लोह भस्म रक्तवर्धक, बल्य एवं अग्निदीपक गुणों से इन लक्षणों में असरदार होता है। कृमि से संबंधित पाण्डु व्याधि में भी लोह भस्म का प्रयोग अत्यंत लाभदायक होता है। साथ ही पाण्डु व्याधि में रक्ताणुओं की वृद्धि करने में सहायता कर लोह भस्म त्वचा का वर्ण प्रकृतिस्थ बनाने में अर्थात् पाण्डुरता कम करने में सहायता करता है।

अत्यधिक रक्तस्राव होने के कारण उत्पन्न दौर्बल्य, घबराहट एवं मूर्च्छा जैसे लक्षण उत्पन्न होने पर लोह भस्म का प्रयोग किया जा सकता है। रक्तार्श में भी अधिक मात्रा में रक्तस्राव होने के कारण उत्पन्न शोथ, पाण्डुता एवं दौर्बल्य में भी लोह भस्म का प्रयोग असरदार साबित हो सकता है। दीर्घकाल तक ज्वर रहने पर प्लीहा वृद्धि हो सकती है। प्लीहा वृद्धि की इस अवस्था में लोह भस्म का प्रयोग किया जा सकता है। सर्वांग शोथ के साथ पांडुता एवं श्वास जैसे लक्षण रहने पर लोह भस्म उपयुक्त होता है। शोथ के साथ यकृत् एवं प्लीहा वृद्धि में भी लोह भस्म का प्रयोग किया जा सकता है। किसी भी प्रकार की जीर्ण व्याधि पश्चात् दौर्बल्य तथा रक्त-मांसधातु क्षय उत्पन्न हो सकता है। इस अवस्था में लोह भस्म रक्तवर्धक एवं बल्य होने से लाभदायक साबित होता है।

लोह भस्म यकृत् पर कार्य कर पित्त का सुयोग्य स्रवण करता है। इसलिए इसका प्रयोग कामला में किया जा सकता है। कुष्ठ में दाह, रक्त वर्ण, स्राव एवं दुर्गंधि आदि लक्षण रहने पर लोह भस्म उपयुक्त होता है। लोह भस्म विकृत आहार पचन से उत्पन्न सेन्द्रिय विषार का पाचन करने में भी लाभदायक होता है। कषाय रसात्मक, लेखन एवं रुक्ष होने से लोह भस्म स्थौल्य में उपयुक्त साबित होता है। साथ ही मेद एवं क्लेद से उत्पन्न अवरोध कम करने में भी यह असरदार होता है। लोह भस्म रसायन होने से रसादि धातुओं का पोषण करता है। साथ ही वृष्य एवं बल्य होने से शरीर शैथिल्य दूर कर शरीर एवं इंद्रियों को पुष्ट कर शक्ति बढाता है। इसलिए इसका प्रयोग नपुंसकता में किया जा सकता है। लोह भस्म स्नायुसंकोच से उत्पन्न शूल में भी लाभ देता है।

पंचामृत पर्पटी

योगरत्नाकर – ग्रहणी

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०८००१३

साधारण रुप से रसशास्त्रीय कल्पों का खल्वी, पर्पटी, कूपीपक्व एवं पोट्टली कल्प इन चार प्रकारों में वर्गीकरण किया जा सकता है।

सारे ही पर्पटी कल्प शोधित पारद के 'पोट – बंध' है। रसरत्नसमुच्चयकारने **द्रुतकज्जलिका मोचापत्रके चिपिटीकृता। स पोट: पर्पटी चैव बालाद्यखिलरोगनुत्।।** र.र.स.११/७२ इन शब्दों में पर्पटी को परिभाषित किया है। पदार्थों को चपटा कर अत्यंत पतला बनाने हेतु द्रवित कज्जली को गाय के ताजे गोबर के उपर रखे हुए दो घृतलिप्त कदली पत्र के मध्य में दबाया जाता है। द्रवित कज्जली की उष्णता एवं गाय के गोबर के कारण पर्पटी काफी गुरु होने से उसका विघटन ग्रहणी अवयव के स्तर पर होता है।

पंचामृत पर्पटी पाँच द्रव्यों का प्रयोग कर तैयार की जाती है, जो अमृत के समान कार्य करती है। वह हैं – शोधित पारद, शोधित गंधक, अभ्रक भस्म, लोह भस्म एवं ताम्र भस्म। यह उपरोक्त वर्णित पद्धति के अनुसार तैयार की जाती है।

पंचामृत पर्पटी में उपस्थित कज्जली १ भाग शोधित पारद एवं २ भाग शोधित गंधक का प्रयोग कर तैयार की जाती है। कज्जली योगवाही एवं रसायन कार्य करती है। लोह भस्म रक्तवर्धक, रसायन एवं बल्य है, तथा ताम्र भस्म अपने यकृतोत्तेजन कार्य से यकृत् को पाचक पित्त के सुयोग्य स्रवण में सहायता करता है। साथ ही, ताम्र भस्म लेखन, विषनाशक, रक्तवर्धक एवं योगवाही होता है। अभ्रक भस्म उर:, कण्ठ एवं शिर: पर बल्य के साथ ही साथ रसायन कार्य करता है।

योगरत्नाकर के निम्नलिखित सूत्र में पंचामृत पर्पटी की कार्मुकता का वर्णन किया है,

स्यात् पञ्चामृतपर्पटी ग्रहणिकायक्ष्मातिसारज्वर
स्त्रीरुक् पाण्डुगराम्लपित्तगुदजक्षुन्मान्द्यविध्वंसिनी।।

यो.र. ग्रहणीचिकित्सा

पंचामृत पर्पटी का प्रयोग विशेषत: ग्रहणी में असरदार साबित होता है। साथ ही यह राजयक्ष्मा, अतिसार, ज्वर, स्त्री रोग, पाण्डु, गरविष, अम्लपित्त, अर्श एवं अग्निमांद्य में भी उपयुक्त है।

पंचामृत पर्पटी यकृतोत्तेजक एवं पित्तस्रावक होने से अन्य पर्पटियों से भिन्न रुप से उसका प्रयोग पित्तप्रधान विकारों में किया जा सकता है। क्योंकि, ताम्र भस्म मार्गावरोध कम कर पित्त के सुयोग्य स्रवण में सहायता करता है। तीक्ष्ण गुणात्मक घटक द्रव्य – ताम्र भस्म के कारण पंचामृत पर्पटी का प्रयोग करते समय सावधानी बरतनी चाहिए।

कुछ हद तक पंचामृत पर्पटी शोधन कार्य भी करती है। फुफ्फुस, यकृत् एवं आंत्र आदि जैसे अवयव विकृति से संबंधित क्षय व्याधि की चिकित्सा पंचामृत पर्पटी का प्रयोग कर प्रभावी रुप से की जा सकती है। इस अवस्था में ताम्र भस्म एवं अभ्रक भस्म आदि घटक द्रव्य पंचामृत पर्पटी को धातुपरिपोषण क्रम सुधारने में सहायता करते हैं। पंचामृत पर्पटी यकृत–प्लीहा

वृद्धि एवं उदर में लाभदायक होती है। दूषीविष के कारण उत्पन्न यकृत् शोथ की चिकित्सा पंचामृत पर्पटी का प्रयोग कर प्रभावी रुप से की जा सकती है। यह यकृद्वाल्योदर में प्रभावी साबित होती है।

पंचामृत पर्पटी का संयोग आमाशय एवं ग्रहणी विकृति से संबंधित पाण्डु व्याधि में सहायक साबित होता है। पारद–गंधक कज्जली लोह भस्म के रक्तवर्धन कार्य को बढाने में सहायक होती है। ताम्र भस्म यह लोह भस्म के पाचन, शोषण एवं वितरण में सहायक होता है।

योगरत्नाकर के अनुसार व्याधि अवस्था की दृष्टि से पंचामृत पर्पटी का प्रयोग अनुपान रुप में किया जा सकता है। विशेषत: ग्रहणी में शोधित हिंगु, सैंधव एवं जीरक के साथ इसका प्रयोग करना चाहिए।

प्रवाल पिष्टी

सिद्धयोगसंग्रह

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. – ०६०००२

शोधित प्रवाल चूर्ण का गुलाब जल के साथ अत्यंत महीन होने तक मर्दन कर प्रवाल पिष्टी तैयार की जाती है। प्रवाल के गुणों का वर्णन रसरत्नसमुच्चयकारने निम्नप्रकार से किया है,

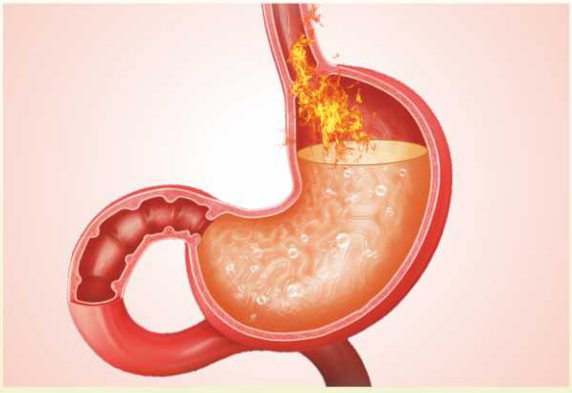

क्षयपित्तास्रकासघ्नं दीपनं पाचनं लघु।
विषभूतादिशमनं विद्रुमं नेत्ररोगनुत्।

र. र. स. ४/२०

अर्थात् प्रवाल क्षय, रक्तपित्त एवं कास को नष्ट करता है। यह अग्निदीपक, पाचक, लघु, विष एवं नेत्ररोगनाशक है। साथ ही प्रवाल मधुर, कफ–पित्तनाशक एवं शीत वीर्यात्मक है। शोधित प्रवाल चूर्ण का गुलाब जल के साथ दीर्घकाल तक मर्दन करने पर प्रवाल पिष्टी के शीत, सौम्य तथा दाहशामक गुणों की वृद्धि होती है। साथ ही यह तत्काल प्रभावी होती है।

प्रवाल पिष्टी विशेष पित्तशामक एवं पित्तविकारघ्न है। ज्वर की तीव्रावस्था में प्रवाल पिष्टी का प्रयोग किया जा सकता है। पित्तप्रधान ज्वर में दाह, तृष्णा, निद्रानाश, छर्दि, भ्रम एवं शिर:शूल आदि लक्षण होने पर प्रवाल पिष्टी लाभदायक होती है। इस अवस्था में प्रवाल पिष्टी अग्निदीपन , पाचन , पित्तशमन एवं दाहशमन कार्य से लाभ देती है। रक्तपित्त में पित्तप्रकोप मुख्य कारण होता है। प्रकुपित पित्त अपने उष्ण एवं तीक्ष्ण गुणों से रक्त को दूषित करता है, जिससे रक्तपित्त में शरीर के संभावित मार्गों से रक्तस्राव होता है। रक्तपित्त में मुख, नासा, कर्ण, गुद या मूत्रमार्ग से भी रक्तस्राव हो सकता है। इस अवस्था में प्रवाल पिष्टी दूषित पित्त एवं रक्त की उष्णता का नियमन कर प्रकुपित पित्त पर शामक एवं दूषित रक्तधातु पर प्रसादक कार्य करती है।

कई बार व्यक्तियों में उष्ण वातावरण के कारण नासामार्ग से रक्तस्राव उत्पन्न होता है। प्रवाल पिष्टी शीत, पित्तशामक एवं रक्तप्रसादक होने से इस अवस्था में लाभदायक साबित होती है। पित्त दुष्टी के कारण अग्निमांद्य उत्पन्न हो सकता है। परिणामस्वरुप अरुचि, कंठदाह एवं ह्रल्लास आदि लक्षण दिखाई दे सकते हैं। कभी – कभी अग्निमांद्य के परिणामस्वरुप रसाजीर्ण भी उत्पन्न होता है। रसाजीर्ण के कारण अरुचि, लालास्राव, छर्दि, उदरगौरव एवं उदरशूल आदि लक्षण दिखाई दे सकते हैं। इस अवस्था में प्रवाल पिष्टी अग्निदीपन, पाचन एवं पित्तशमन कार्य से उपयुक्त साबित होती है। प्रवाल पिष्टी पाचक पित्त का सुयोग्य स्रवण करने में सहायक होने से उपरोक्त लक्षणों में असरदार साबित होती है।

अम्लपित्त के कारण उत्पन्न उर:दाह, कंठदाह, उदरदाह, हस्त – पादतलदाह, शिर:शूल, भ्रम, मूर्च्छा, ह्रल्लास, छर्दि, तृष्णा एवं अग्निमांद्य में प्रवाल पिष्टी उपयुक्त होती है। पित्तज कास में उदरदाह, शुष्कास्यता, तिक्तास्यता, तृष्णा, छर्दि विशेषत: कास वेगोत्तर होनेवाली छर्दि में यह विशेष लाभदायक साबित होती है। पित्ताभिष्यंद में आरक्त वर्णी नेत्र, नेत्रशूल एवं नेत्रदाह आदि लक्षण रहने पर प्रवाल पिष्टी का प्रयोग किया जा सकता है। बालकों में अस्थिमृदुता (Rickets) के कारण उत्पन्न अस्थि मार्दवता एवं ज्वर में प्रवाल पिष्टी का प्रयोग किया जा सकता है।

उष्ण वातावरण में उष्ण वीर्यात्मक आहार के सेवन से उत्पन्न दाह में प्रवाल पिष्टी शीत वीर्यात्मक होने से लाभदेय होती है। साथ ही नेत्रदाह, हस्त-पादतल दाह एवं मूत्रदाह तथा रक्त या गहरे पीले रंग की मूत्रप्रवृत्ति में प्रवाल पिष्टी अपने दाहशमन कार्य से विशेष प्रभावी होती है। जीर्ण उपदंश के परिणामस्वरुप उत्पन्न बार-बार मूत्रप्रवृत्ति एवं सदाह मूत्रप्रवृत्ति में भी प्रवाल पिष्टी का प्रयोग किया जा सकता है। स्त्रियों में उत्पन्न रक्तप्रदर एवं अत्यार्तव में प्रवाल पिष्टी का प्रयोग प्रभावी रुप से किया जा सकता है।

संशमनी वटी

आयुर्वेद सारसंग्रह

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. - ०५००५७४

'संशमनी वटी' आम तौर पर गुडूची घन वटी के नाम से भी ज्ञात है। संशमनी वटी गाढा/सान्द्र सार प्राप्त करने हेतु क्वाथ को मंद अग्नि पर उबालकर कम कर तैयार की जाती है। भावप्रकाशकारने गुडूची के गुणधर्मों का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में किया है : -

गुडूची कटुका तिक्ता स्वादुपाका रसायनी।।
संग्राहिणी कषायोष्णा लघ्वी बल्याऽग्निदीपनी।

भा. प्र. गुडूच्यादिवर्ग ८-१०

संशमनी वटी में उपस्थित गुडूची कटु - तिक्त - कषाय रसात्मक, मधुरपाकी एवं उष्ण वीर्यात्मक है। साथ ही यह रसायन, संग्राही, लघु, बल्य एवं अग्निदीपक है। यह त्रिदोषशामक है, एवं आमपाचन का कार्य उत्तम करती है। यह तृष्णा, दाह, मोह, कास, पाण्डु, कामला, कुष्ठ, वातरक्त, ज्वर, कृमि एवं छर्दि में उपयुक्त है। साथ ही यह प्रमेह, श्वास, अर्श, मूत्रकृच्छ्र एवं हृद्रोग आदि विकारों में भी असरदार है। शारंगधराचार्यजीने गुडूची का वर्णन रसायन द्रव्यों में किया है। गुडूची अपने उष्ण, लघु, रुक्ष, आमपाचक एवं अग्निदीपक गुणों से विशेषत: रसधातु के स्तर पर कार्य करती है।

ज्वर रसवह स्रोतस् से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण व्याधि है। संशमनी वटी, जो प्रत्यक्ष में गुडूची घन है, वह प्रभावी रुप से आमपाचन के साथ ही ज्वर में उत्पन्न हुअे स्रोतसावरोध को भी कम करती है। अधिक लाभ हेतु संशमनी वटी का प्रयोग अमृतारिष्ट के साथ किया जा सकता है। जीर्णज्वर के पश्चात् उत्पन्न दौर्बल्य में संशमनी वटी का प्रयोग किया जा सकता है। संशमनी वटी का प्रयोग कर कष्टार्तव एवं अनियमित रज:प्रवृत्ति आदि जैसे स्त्री रोगों की चिकित्सा प्रभावी रुप से की जा सकती है। इन अवस्था में इसका प्रयोग अभ्रलोह टेबलेट्स एवं चंद्रप्रभा (लोह-शिलाजतुयुक्त) के साथ किया जा सकता है।

संशमनी वटी वातरक्त की चिकित्सा में अधिक असरदार साबित होती है। संशमनी वटी का प्रयोग कर संधिशूल, संधिशोथ, त्वक् रौक्ष्य एवं काष्र्य आदि जैसे वातरक्त के लक्षणों से राहत मिलती है। अधिक लाभ हेतु इसका प्रयोग कैशोर गुग्गुल के साथ किया जा सकता है।

अग्निदीपक, आमपाचक, उष्ण एवं बल्य होने से आमवात एवं अग्निमांद्य आदि जैसे संबंधित लक्षणों में संशमनी वटी का प्रयोग उपयुक्त साबित होता है।

संशमनी वटी अपने आमपाचन, ज्वरघ्न एवं अग्निदीपन कार्य से सूतिकाज्वर में भी उपयुक्त है।

संशमनी वटी रसायन कर्म से व्याधिक्षमत्व बढाने में अत्यंत उपयुक्त साबित होती है। इसलिए, इसका प्रयोग जीर्ण व्याधि में किया जा सकता है।

संशमनी वटी रसधातुगामी होने से त्वचाविकार की चिकित्सा में असरदार होती है।

ताम्र भस्म

रसरत्नसमुच्चय

एस्. डी. एस्. मोनोग्राफ क्र. ०२००१९

श्री धूतपापेश्वर लि. का ताम्र भस्म सोमनाथी ताम्र भस्म निर्माण पद्धति का प्रयोग कर तैयार किया गया है। यह पारदमारित होने के कारण अधिक प्रभावी साबित होता है। आयुर्वेदिक के साथ ही साथ आधुनिक मानकों का प्रयोग कर इसका परीक्षण किया जाता है। इसकी गुणवत्ता मानकीकृत है। अमृतिकरण संस्कार ताम्र भस्म को अधिक प्रभावी एवं किसी भी तरह के अनचाहे हानिकारक दुष्परिणामों से सुरक्षित बनाता है।

ताम्र तिक्त–कषाय–अम्ल रसात्मक, मधुर विपाकी एवं उष्ण है। यह पित्त–कफशामक, आमपाचक, नेत्र्य एवं लेखन कार्य करता है।

रसरत्नसमुच्चयकारने ताम्र भस्म की कार्मुकता का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में किया है:

तत् रोगहर अनुपानसहितं ताम्रं द्विवल्लोन्मितं,
सलीढं परिणामशूलं उदरं शूलं च पाण्डुज्वरम्।
गुल्मप्लीह यकृत् क्षयाग्निसदनं मेहं च मूलामयं,
दुष्टां च ग्रहणीं हरेद् ध्रुवमिदं श्रीसोमनाथाभिधम्।।

र.र.स.५/५४

व्याधि के अनुसार ताम्र भस्म का प्रयोग योग्य अनुपान के साथ करने पर यह परिणामशूल, उदरशूल, पाण्डु, ज्वर, गुल्म, यकृत् – प्लीहा वृद्धि, क्षय, अग्निमांद्य, प्रमेह, अर्श एवं ग्रहणी जैसे विकारों में उपयुक्त साबित होता है।

ताम्र भस्म के तीक्ष्णत्व तथा भेदन एवं लेखन आदि जैसे कर्म के कारण उसका प्रयोग क्वचित ही एकल द्रव्य के रुप में किया जाता है। उष्ण एवं तीक्ष्ण होने के कारण इसका प्रयोग गर्भिणी, सूतिका, बालक, वृद्ध व्यक्ति, क्षतक्षीण या रक्तार्श से पीडित व्यक्तियों में नहीं करना चाहिए। ताम्र भस्म के कारण यदि कोई विकार उत्पन्न होते हैं, तो प्रतिकारक (Antidote) के रुप में मौक्तिक भस्म का प्रयोग किया जा सकता है।

ताम्र भस्म विशेषत: यकृत्, प्लीहा एवं अष्ठीला आदि अवयव तथा गुल्म की अतिरिक्त एवं अप्राकृत् वृद्धि कम करने में उपयुक्त साबित होता है।

पाण्डु व्याधि से संबंधित यकृत्/प्लीहा वृद्धि में ताम्र भस्म का प्रयोग उसके लेखन एवं यकृतोत्तेजन कार्य से सहायक साबित होता है।

ताम्र भस्म का प्रयोग अनेक रसकल्पों में घटक द्रव्य के रुप में किया जाता है, उसमें से अधिकतर प्रयुक्त किया जानेवाला कल्प है, 'आरोग्यवर्धनी'। आरोग्यवर्धनी में प्रयुक्त ताम्र भस्म यकृत् को पाचक पित्त के सुयोग्य स्रवण के लिए सहायता करता है।

पित्त का कम हुआ द्रव गुण उसे अधिक घन बनाता है। इस अवस्था में, पित्ताशय में पित्ताश्मरी उत्पन्न होने के साथ उससे संबंधित उदरशूल भी उत्पन्न होता है। ऐसे स्थिति में पित्ताश्मरी के भेदन में ताम्र भस्म अपने उष्ण, लेखन एवं भेदक गुणों से सहायक साबित होता है। साथ ही यह संबंधित उदरशूल कम करने में भी सहायक होता है।

ताम्र भस्म मूत्रल अर्थात् मूत्र निर्मिति बढाने में सहायक नहीं है। इसलिए संचित जल को मूत्र के रुप में शरीर से बाहर निकालने हेतु ताम्र भस्म का प्रयोग पुनर्नवा आदि जैसे किसी भी मूत्रल द्रव्य के साथ करना चाहिए।

रसतरंगिणीकारने **मृतन्तु ताम्रं शमयत्यवश्यं शाखाश्रितं कोष्ठसमाश्रितं वा। जत्रूर्ध्वगञ्चापि मलाभिधानं पित्तं कफञ्चापि परं प्रवृद्धम्।।** र.त. ७/५१ इन शब्दों में ताम्र भस्म का वर्णन किया है। ताम्र भस्म का प्रयोग शाखा, कोष्ठ एवं जत्रूर्ध्व अवयव के स्थान पर उत्पन्न वातज एवं कफज विकारों में लाभदायक साबित होता है।

केवल पंजीकृत चिकित्सक, अस्पताल या प्रयोगशालाओं के लिये
© All Copy Rights Reserved

श्री धूतपापेश्वर लिमिटेड

१३५, नानुभाई देसाई रोड, खेतवाडी, मुंबई – ४००००४. • फोन नं.:+९१-२२-६२३४ ६३००, २३८२ ५८८८ • ई-मेल: healthcare@sdlindia.com • वेब: www.sdlindia.com

AVP-H/SDL-VT/SHARAD/S/0718